सत्ता और आज्ञापालन

अरविन्द गुप्ता

लोग हत्या क्यों करते हैं? आज्ञा पालन के नाम पर लोग नरसिंहार क्यों करते हैं?

इंसान कत्ल क्यों करते हैं? आदेश दिए जाने पर फौज और पुलिसवाले बिना पलक झपके दुश्मन को मौत के घाट उतार देते हैं। रोजाना इस प्रकार की घटनाएं घटती हैं। इंदिरा गांधी के हत्या के बाद सिखों का कत्लेआम, बाबरी मस्जिद की घटना, गुजरात के दंगों में हजारों निरीह, बेकसूर लोगों की जान गई। मुंबई में 26 नवंबर 2008 के फिदायीन हमले में सैकड़ों जाने गयीं। चंद महीने पहले 500 नक्सलियों ने घात लगाकर पुलिस दस्ते पर हमला कर पुलिस वालों को मार डाला और सारे हथियार लूट लिए। कुछ वर्ष पहले जब आर्तकियों ने अमरीका की 'ट्विन टावर्स' पर घमासान हमला बोला तब दुनिया का सबसे शक्तिशाली राष्ट्र भी अपनी सुरक्षा में नाकामयाब रहा।

1933 से 1945 के बीच साठ लाख यहूदियों को गैस की भट्टियों में झोंका गया। इस नरसिंहार का नक्शा शायद हिटलर के दिमाग में उपजा हो पर इस कुकर्म का क्रियांवन एक ऐसी व्यवस्था ने किया जिसमें हजारों लोग हिटलर का आदेश मानने को तैयार थे। जर्मनी की फौज को आज्ञा पालन की कड़ी ट्रेनिंग दी जाती थी। 'आज्ञा पालन' के नाम पर हिटलर की फौज ने लाखों बेगुनाह लोगों को बिना पलक झपके मौत के घाट उतारा।

नात्सियों द्वारा यहूदियों का कत्लेआम दुनिया का सबसे बड़ा नरसिंहार माना जाता है परंतु छोटे स्तर पर इस प्रकार की घटनाएं आम बात हैं। साधारण नागरिकों को धर्म, जाति, राष्ट्र, देशभक्ति और भाषा के नाम पर एक-दूसरे को मारने के लिए लगातार उकसाया जाता है। 'आज्ञा पालन' लोग अपनी ड्यूटी समझते हैं। 'आज्ञा पालन' एक महान गुण समझा जाता है। पर अगर 'आज्ञा पालन' का दुरउपयोग कत्लेआम और नरसिंहार के लिए किया जाए तो यह निश्चित रूप से एक बहुत दुरभाग्यपूर्ण बात होगी।

यह भी मान्यता है कि अगर लोग समाज में 'आज्ञा पालन' नहीं करेंगे तो समाज का ढांचा चरमराने लगेगा। इसके लिए कभी-कभी अनैतिक आदेशों का भी पालन करना जरूरी है। परंतु मानवतावादी मानते हैं कि लागाों को अनैतिक आदेशों का बहिष्कार करना चाहिए।

क्या लोग मूलत: क्रूर होते हैं। मनुष्य की लंबी विकास यात्रा के दौरान शायद 'क्रूरता' और 'हिंसा' का कुछ रोल रहा हो, पर क्या आज के युग में इसका कुछ महत्व है? बहुत से चिंतकों ने मनुष्य को मूलत: 'अच्छा' माना है। उनके अनुसार परिस्थितियां ही लोगों को ढालती हैं। लोग जन्म से ही चोर, उचक्के, डाकू, आतंकवादी नहीं होते पर परिस्थितियां ही उन्हें ऐसा बनाती हैं। और बदली अच्छी सामाजिक परिस्थितियां उन्हें अच्छे नागरिक बनाती हैं। इन मान्यताओं के परीक्षण के लिए 1960 के दशक में एक महत्वपूर्ण प्रयोग किया गया जिसका विस्तृत उल्लेख यहां है।

यह प्रयोग अमरीका के येल विश्वविद्यालय में किया गया। प्रयोग सरल था। उद्देश 'सजा' का 'सीखने' पर क्या प्रभाव होता है, इसे समझना था। प्रयोग में दो मुख्य पात्र थे - एक 'टीचर' और दूसरा 'छात्र'। 'छात्र' को कमरे में लाकर उसे कुर्सी पर बिठाया जाता और फिर उसके हाथों को बांध दिया जाता। उसके पश्चात बिजली के झटके देने के लिए उसकी कलाई पर एक 'इलेक्ट्रोड' फिट किया जाता। 'छात्र' का काम था जोड़ीदार शब्द सीखना - जैसे ताला-चाभी, जूता-मोजा आदि।

अगर 'छात्र' गलत उत्तर देता तो 'टीचर' सजा के लिए उसे बिजली का झटका देता। 'टीचर' बिजली के झटके की तीव्रता को 15-वोल्ट से बढ़ाकर 450-वोल्ट तक ले जा सकता था। प्रयोग का उद्देश यह जानना था कि एक ठोस स्थिति में कोई इंसान आदेश मिलने पर किसी दूसरे इंसान को कितना अधिक कष्ट दे सकता है। कब 'टीचर' का नैतिक बल दिए आदेश की अवहेलना करेगा और वो 'आर्डर' मानने से मना करेगा?

जब 'छात्र' को 75-वोल्ट का शॉक लगता तो वो सिर्फ एक 'आह' भरता। 120-वोल्ट लगने पर वो दर्द होने की शिकायत दर्ज करता। 150-वोल्ट लगने पर वो प्रयोग छोड़ने की दलील करता। जैसे-जैसे शॉक की तीव्रता बढ़ती जाती उसकी भावनात्मक चीत्कारें भी साथ-साथ बढ़ती जातीं। 285-वोल्ट का शॉक लगने पर 'छात्र' गहरे दर्द से कराहने लगता।

प्रयोग में देखा गया कि बहुत से 'टीचर' अपने 'छात्र' की आहों और कराहटों के बावजूद शॉक की तीव्रता बढ़ाते जाते। जिन 1000 'टीचर' के साथ यह प्रयोग किया गया उनमें से 700 ने अपने छात्रों को शॉक दिया। इस प्रयोग की सबसे महत्वपूर्ण बात

यह थी कि सारे 'टीचर' दरअसल भोले-भाले साधारण लोग थे। वो केवल प्रयोग में भाग लेने के लिए आए थे। प्रयोग में 'छात्र' का रोल एक प्रोफेशनल एक्टर ने निभाया था। वास्तव में 'छात्र' यानि एक्टर को कोई शॉक नहीं लग रहा था। वो केवल उसका अभिनय कर रहा था।

प्रयोग अत्यंत वैज्ञानिक तरीके से किया गया। येल विश्वविद्यालय के छात्रों को इसमें बहुत आसानी से 'टीचर' या 'छात्र' के रूप में शामिल किया जा सकता था। पर इसकी संभावना था कि उनमें से कुछ ने इसके बारे में सुन रखा हो। इसलिए इस प्रयोग के लिए लोगों को आम समाज से लेना ही बेहतर समझा गया। प्रयोग में भाग लेने वालों के लिए अखबार में एक इश्तहार निकाला गया। उन्हें 'याददाश्त और सीख' के इस प्रयोग में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया गया। भाग लेने वालों को थोड़ा पारश्रमिक भी देने का ऐलान किया गया। प्रयोग में भाग लेने वाले अलग-अलग पेशे के लोग थे। उनमें से ज्यादातर क्लर्क, हाई स्कूल टीचर, सेल्समैन, इंजीनियर और मजदूर थे।

इस प्रकार के व्यवहार को किस तरह समझा जा सकता है?

बहुत से 'टीचर' ने अपने 'छात्र' को अधिकतम शॉक दिया। क्या वे सभी बहुत क्रूर प्रकृति के थे? दो-तिहाई सहभागियों को 'आज्ञाकारी' लोगों की श्रेणी में डाला जा सकता है - क्योंकि वो रुके नहीं और 'छात्र' को ज्यादा-से-ज्यादा शॉक देते चले गए। पर यह सभी लोग साधारण नागरिक थे - कोई क्रिमनल हिस्ट्री-शीटर नहीं थे। इस नतीजे को कैसे समझा जाए? क्या क्रूरता और अत्याचार मानव जाति का अभिन्न अंग हैं। क्या मानव के विकास में इन गुणों का एक अहम रोल था? क्या अलग-अलग धर्मों का इंसान की नैतिकता पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा?

अब प्रश्न यह उठता है कि प्रयोगशाला में किए गए प्रयोग और नात्सी कैम्पों में हुए नरसंहार में कोई संबंध है? वैसे दोनों स्थितियां काफी अलग लगती हैं परंतु कई मायनों में उनमें काफी समानता है। 'आज्ञाकारी' होने का मतलब है किसी और के हुक्म का पालन करना, और कृत्य की स्वयं जिम्मेदारी न लेना। यानि अपनी नैतिकता को ताक पर रखकर, आंख मूंदकर हुक्म और आदेश का पालन करना। यह सोचना भी नहीं कि तुम्हारे कृत्य का इंसानियत पर क्या प्रभाव पड़ेगा। ऐसी अवस्था में लोग बिना सोचे-समझे, अपने विवेक को ठुकराकर तानाशाही आर्डर मानने लगते हैं।

इस पूरे प्रयोग का बुनियादी सार यह है - बिना किसी क्रिमनल हिस्ट्री वाले आम साधारण लोग, किसी असाधारण घातक प्रक्रिया में आसानी से एजेंट बन सकते हैं। बहुत कम लोगों में ही 'अथार्टी' या 'सत्ता' को चुनौती देने का दम होता है। जिन अमरीकी पायलटों ने वियतनाम में बच्चों के गांवों पर बम बरसाए उन्होंने यह काम 'देशभक्ति' के लिए किया। जो आतंकवादी बेकसूर लोगों की धर्म, देश, जाति के नाम पर हत्या करते हैं वो भी इसी प्रकार की दलील देते हैं।

1984 नामक उपन्यास के क्रांतिकारी लेखक जार्ज औरवेल ने इस स्थिति का बयां इन शब्दों में किया:

'मैं जब यह लिख रहा हूं तब कई बहुत पढ़े-लिखे संभ्रांत लोग मेरे ऊपर हवाई जहाजों में उड़ रहे हैं और मुझे मारने की कोशिश कर रहे हैं। उनकी मुझ से कोई दुश्मनी नहीं है और मुझे भी उनसे कोई गिला-शिकवा नहीं है। वो केवल अपनी 'ड्यूटी' निभा रहे हैं। मेरे ख्याल से उसमें से बहुत से नेक अच्छे लोग होंगे जो अपनी निजी जिंदगी में किसी की हत्या करने की बात सोच भी नहीं सकते होंगे। पर अगर उसमें से किसी का फेंका हुआ बम मेरी खोपड़ी पर गिर जाए तो उसे उसका कुछ गम न होगा और वो चैन की नींद सोएगा।'

येल विश्वविद्यालय के इस प्रयोग से हम कई बातें सीख सकते हैं - खासकर बच्चों की शिक्षा को लेकर। अधिकांश स्कूलों में सुबह की प्रार्थना होती है। हरेक प्रार्थना का उद्देश्य भगवान, गुरू और माता-पिता की शक्ति, सत्ता के सामने मथ्था टेकने की दलील होती है। बाद में राजसत्ता इसी ट्रेनिंग का लाभ उठाती है - देशभक्ति, धर्म आदि का राग अलापती है, युवाओं को फौज में भरती करती है जिससे कि वो 'ग्लोबल आर्तकियों' का सफाया कर सकें।